ज्ञानेंद्रपति

जन्म	:	1 जनवरी 1950 ।
जन्म-स्थान	:	पथरगामा, गोड्डा, झारखंड ।
माता-पिता	:	सरला देवी एवं देवेंद्र प्रसाद चौबे ।
शिक्षा	:	प्रारंभिक शिक्षा गाँव के स्कूल में ; बी० ए० और एम० ए० अंग्रेजी विषय में पटना विश्वविद्यालय से । फिर हिंदी में भी एम० ए० बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर से ।
वृत्ति	:	बिहार लोक सेवा आयोग द्वारा चयनित होकर कारा अधीक्षक के रूप में कार्य करते हुए कैदियों के लिए अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम चलाए । अनंतर नौकरी छोड़कर फ़कत कविता लेखन ।
निवास	:	वाराणसी, उत्तर प्रदेश ।
सम्मान	:	पहल सम्मान (2006), 'संशयात्मा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार (2006) ।
कृतियाँ	:	आँख हाथ बनते हुए (1970), शब्द लिखने के लिए ही यह कागज बना है (1980), गंगातट (2000), संशयात्मा (2004) भिनसार (2006) कवि ने कहा (2007) – कविता संग्रह । एकचक्रानगरी (काव्य नाटक) । पढ़ते-गढ़ते (2005) – कथेतर गद्य ।

एक संभावनाशाली युवा कवि के रूप में ज्ञानेंद्रपति बीसवीं शती के आठवें दशक में उदित हुए । अपने शब्दचयन, भाषा, संवेदना की ताजगी और रचना विन्यास में आत्मसजग संधान जैसी विशेषताओं के कारण उन्होंने हिंदी कविता के सुधी पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया । 1980 में आए अपने दूसरे कविता संग्रह से उन्होंने विचारशील पाठकों और स्वतंत्रमति विवेकवान आलोचकों को अपनी प्रतिभा, काव्य ऊर्जा और स्वाधीन सामर्थ्य से आश्वस्त किया । जीवन और रचना में उनकी एक जैसी स्वनिर्भर एवं आत्मविश्वासपूर्ण गति-मति और अंदाज अक्सर चालू हलकों में उन्हें संदेह का पात्र बनाते रहे । प्रचलित फैशन और रीतियों से बेपरवाह होने के कारण प्रायः स्वार्थों पर टिकी गुटबंदी और ओछी राजनीति से चालित लेखन-प्रकाशन के संसार का चालू प्रवाह उनसे कतराकर निकलता रहा । किंतु ज्ञानेंद्रपति एक ऐसे अध्ययनशील और मनीषाधर्मी रचनाकार हैं जो निजी संबंधों, सामाजिक रिश्तों और रचनाधर्म को अपने ही ढंग से रचते-गढ़ते हुए निरंतर आगे बढ़ते रहे हैं । लेखक संगठनों, साहित्यिक राजनीति और लेन-देन के सतही व्यवहारों-बर्तावों की उन्होंने कभी चिंता नहीं की । अपनी गतिविधियों और रंग-ढंग से वे प्रायः एक व्यक्तिवादी रचनाकार के रूप में इंगित किए जाते रहे, किंतु उन्हीं के बीच, जो रचना की जगह रचनाकार को देख कर अपना निष्कर्ष रखते हैं; क्योंकि अपने बारे में वे स्वयं जानते हैं कि उनका रचनाकर्म निरा शब्द व्यापार है; खोखला और सारहीन, एक मिथ्याकर्म । ज्ञानेंद्रपति अपनी समझ, संवेदना और दृष्टिकोण में ही नहीं, जीवन-व्यवहार, संबंधों और रचना के भीतर-बाहर के सच में भी 'व्यक्तिवाद' के फर्क को समझते और जाहिर करते हुए कवि और कविता के सामाजिक सरोकारों में सजग अंतर्निष्ठा बनाए रखनेवाले रचनाकार हैं । उनका रचना संसार इसका ज्वलंत साक्ष्य है ।

इतिहास, परंपरा और स्मृतियों का ज्ञानेंद्र की कविता में एक अद्‌भुत रचाव-बसाव है; किंतु वह कवि को उस समयबोध और वर्तमान से विमुख या विच्युत नहीं करता; बल्कि उसे विस्तार देता और समृद्ध करता है । कवि व रचनाकर्म की ऊर्मियाँ और अनुगूँजें दूर तक फैलती हैं; उसका समयबोध अधिक प्रशस्त, गुंजान, गरिमामय और व्यक्तित्त संपन्न हो उठता है । ज्ञानेंद्र के यहाँ समयबोध और वर्तमान की आँच मंद नहीं पड़ती, उसके ताप और प्रकाश में हं स्मृतियाँ, इतिहास और परंपरा का रचाव-बसाव होता है । मूल से उखड़ने और पुन: उससे जा लगने की छटपटाहट की समस्या उनके यहाँ नहीं है, क्योंकि उनके साथ निर्णायक रूप में ऐसा कुछ घटित नहीं हुआ । बीत चुके, गँवाए और खोए जा चुके की पीड़ा और शोक उनकी कविता में है; पर 'नास्टेल्जिया' (आर्तगृहातुरता) बनकर नहीं; एक अनिवार्य दुख-विषाद की तरह जो यथार्थ की प्रतीति को, कवि के अनुभव को गहराता है और कविता के चेहरे को मानवीय विश्वसनीयता प्रदान करता है । ज्ञानेंद्रपति वस्तुओं, दृश्यों, प्रसंगों के निरीक्षण-पर्यवेक्षण का अपना अलग अंदाज आज भी बदस्तूर बनाए हुए हैं, शब्द-चयन और काव्य-भाषा के तल पर सावधान चयनधर्मिता और प्रयोगों का सिलसिला उनकी कविता में आज भी अटूट है, कदाचित वह जरूरत के मुताबिक बढ़ा भी है । 'गंगातट' नामक संग्रह के द्वारा अपने समकालीनों के बीच उन्होंने अद्‌भुत सर्जनात्मक स्थैर्य और धैर्य प्रमाणित कर दिखाया है । उनकी कविता के उत्स विपुल और बहुरूप हैं । पाठक की उत्सुकता उनमें बढ़ी है ।

उनके नवीनतम कविता संग्रह 'संशयात्मा' से ली गई प्रस्तुत कविता ऊपर कही गई बातों को उदाहृत और प्रमाणित करती है ।

◆ ◆ ◆

"**पाँच चिड़ियों ने**
खाली आकाश को
सूने घाट पर नहाने आई सखियों-सा
अपनी क्रीड़ाओं से भर दिया

फिर आए
राहगीर पक्षियों के
मंथर झुंड
काँपते आकाश को
सुतल करते ।"

–ज्ञानेंद्रपति

गाँव का घर

गाँव के घर के
अंत:पुर की वह चौखट
टिकुली साटने के लिए सहजन के पेड़ से छुड़ाई गई गोंद का गेह वह
वह सीमा
जिसके भीतर आने से पहले खाँस कर आना पड़ता था बुजुर्गों को
खड़ाऊँ खटकानी पड़ती थी खबरदार की
और प्रायः तो उसके उधर ही रुकना पड़ता था
एक अदृश्य पर्दे के पार से पुकारना पड़ता था
किसी को, बगैर नाम लिए
जिसकी तर्जनी की नोक धारण किए रहती थी सारे काम, सहज,
शंख के चिह्न की तरह
गाँव के घर की
उस चौखट के बगल में
गेरू-लिपी भीत पर
दूध-डूबे अँगूठे के छापे
उठौना दूध लाने वाले बूढ़े ग्वाल दादा के-
हमारे बचपन के भाल पर दुग्ध-तिलक-
महीने के अंत में गिने जाते एक-एक कर

गाँव का वह घर
अपना गाँव खो चुका है
पंचायती राज में जैसे खो गए पंच परमेश्वर
बिजली-बत्ती आ गई कब की, बनी रहने से अधिक गई रहनेवाली
अबके बिटौआ के दहेज में टी. वी. भी
लालटेनें हैं अब भी, दिन-भर आलों में कैलेंडरों से ढँकी-

रात उजाले से अधिक अँधेरा उगलतीं
अँधेरे में छोड़ दिए जाने के भाव से भरतीं
जबकि चकाचौंध रोशनी में मदमस्त आर्केस्ट्रा बज रहा है कहीं, बहुत दूर,
पट भिड़काए
कि आवाज भी नहीं आती यहाँ तक, न आवाज की रोशनी,
न रोशनी की आवाज
होरी-चैती बिरहा-आल्हा गूँगे
लोकगीतों की जन्मभूमि में भटकता है एक शोकगीत अनगाया अनसुना
आकाश और अँधेरे को काटते
दस कोस दूर शहर से आने वाला सर्कस का प्रकाश-बुलौआ
तो कब का मर चुका है
कि जैसे गिर गया हो गजदंतों को गँवाकर कोई हाथी
रेते गए उन दाँतों की जरा-सी धवल धूल पर
छीज रहे जंगल में,
लीलने वाले मुँह खोले, शहर में बुलाते हैं बस
अदालतों और अस्पतालों के फैले-फैले भी रुँधते-गँधाते अमित्र परिसर
कि जिन बुलौओं से
गाँव के घर की रीढ़ झुरझुराती है

◆ ◆ ◆

अभ्यास

कविता के साथ

1. कवि की स्मृति में 'घर का चौखट' इतना जीवित क्यों है ?
2. 'पंच परमेश्वर' के खो जाने को लेकर कवि चिंतित क्यों है ?
3. 'कि आवाज भी नहीं आती यहाँ तक, न आवाज की रोशनी न रोशनी की आवाज' – यह आवाज क्यों नहीं आती ?
4. आवाज की रोशनी या रोशनी की आवाज का क्या अर्थ है ?
5. कविता में किस शोकगीत की चर्चा है ?
6. सर्कस का प्रकाश-बुलौआ किन कारणों से मरा होगा ?

. गाँव के घर की रीढ़ क्यों झुरझुराती है, इस झुरझुराहट के क्या कारण हैं ?

. मर्म स्पष्ट करें –

'कि जैसे गिर गया हो गजदंतों को गँवाकर कोई हाथी'

8. कविता में कवि की कई स्मृतियाँ दर्ज हैं । स्मृतियों का हमारे लिए क्या महत्त्व होता है, इस विषय पर अपने विचार विस्तार से लिखें ।

9. चौखट, भीत, सर्कस, घर, गाँव और साथ ही बचपन के लिए कवि की चिंता को आप कितना सही मानते हैं ? अपने विचार लिखें ।

10. जिन चीजों का विलोप हो चुका है और जिनके लिए शोक है, उनकी एक सूची बनाएँ ।

कविता के आस-पास

1. होरी-चैती, विरहा-आल्हा ये हमारे ग्राम्य लोकगीत हैं । इन ग्राम्यगीतों का क्या महत्त्व है ? क्या इन गीतों का संबंध हमारे वर्तमान से नहीं है ? इनके विषय में अपने बुजुर्गों और शिक्षकों से चर्चा करें ।
2. गाँव के प्रति हमारा आकर्षण उसके भूगोल, देशीपन और अकृत्रिमता के कारण होता है ? आपका गाँव कैसा है ? मित्रों से चर्चा करें और अपने विचार 'मेरा गाँव' शीर्षक निबंध में प्रस्तुत कीजिए ।
3. इस कविता की केंद्रीय चिंता और संवेदना पर विचार करते हुए आप गाँव के जीवन के अपने अनुभवों से उनकी तुलना करें तथा अपनी प्रतिक्रिया लिखें ।
4. ज्ञानेंद्रपति की एक कविता 'चंद्रविंदु की चिंता' यहाँ दी जा रही है –

मुझे चंद्रविंदु की चिंता है
चंद्रविंदु नहीं नभ का
भाषा का
लिपि का
देवनागरी लिपि का
एक मानव-समाज की ऊर्जा का एक अर्थ चित्र
नयनाभिराम
लिपि के नभ का चंद्रविंदु
लिपि जो एक मानव-सभ्यता का आँगन है
मुझे चंद्रविंदु की चिंता है
लिपि को सुदूर जन तक पसारनेवाले ये छापेखाने
रौंद जाएँगे क्या
देवनागरी लिपि की सर्वाधिक सुंदर सुघड़ कोमल आकृति
यंत्रवक्ष में
न रहेगी चंद्रविंदु के लिए जगह
सूरज की पीठ पर छपने वाले अखबार
छपेंगे चंद्रविंदु के बगैर
बड़ी होगी जो पीढ़ी बेटे-बेटियों की
अनुस्वार के उदित गोलाकार में चंद्रविंदु की
अस्ताभा नहीं पहचानेगी

'गाँव का घर' और इस कविता में समान चिंता के कौन से तत्त्व हैं, उल्लेख करें ।

4. कविता से देशज शब्दों को चुन कर लिखें।
5. धवल-धूल से क्या आशय है ?

भाषा की बात

1. 'गाँव के घर की रीढ़ झुरझुराती है'। 'झुरझुराती' के लिए आप कोई अन्य शब्द देना चाहेंगे, या यह सबसे सटीक क्रिया है, यदि हाँ तो क्यों ?
2. 'बिजली बत्ती आ गई कब की, बनी रहने से अधिक गई रहने वाली' – कवि के भाषिक कौशल का यह एक उपयुक्त उदाहरण है। बिजली नहीं रहती इसके लिए 'नहीं रहने वाली' प्रयोग होता तो उतनी व्यंजकता नहीं आती जितनी 'गई रहने वाली' से। इस दृष्टि से विचार करते हुए कविता से ऐसी पंक्तियों को चुनें।
3. इन शब्दों के लिए कविता में प्रयुक्त विशेषणों से अलग विशेषण दें –
   रोशनी, आर्केस्ट्रा, आवाज, जन्मभूमि, शोकगीत, आकाश, सर्कस, हाथी, धूल, भीत।
4. 'गाँव का घर' की काव्यभाषा की विशेषताएँ लिखिए।

शब्द निधि

अंत:पुर : घर का आंतरिक भाग जो ड्योढ़ी के बाद पड़ता है
भीत : दीवार
धवल : उजला
गेह : घर
दूध-डूबे अँगूठे के छापे : दूध में अँगूठा डुबाकर दीवार पर लगाए गए चिह्न
उठौना : रोज़ बाहर से नियमित दूध खरीदकर मँगाए जाने का क्रम